**Purva Mimaansa**
*A Multi-discipinary Bi-annual Research Journal*
*(Double Blind Peer Reviewed)*

*Vol. 8 No. 1-2, March-Sep. 2017*
*ISSN : 0976-0237*

# शब्दों के निर्वचन सम्बन्धी आचार्य यास्क का वैज्ञानिक दृष्टिकोण

डा॰ बलविन्द्र कुमार,

वैदिक मन्त्रों के ज्ञानार्थ वेदाङ्गों की अत्यधिक उपयोगिता स्वीकार की जाती है। ऐसी मान्यता है कि वेदों के अध्ययन को सरल एवं सुगम बनाने की दृष्टि से छः वेदाङ्गों -- शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द एवं ज्योतिष की रचना की गयी है। इन वेदाङ्गों के महत्त्व की दृष्टि से पाणिनीयशिक्षा में छन्द, कल्प, ज्योतिष, निरुक्त, शिक्षा एवं व्याकरण रूपी वेदाङ्गों की तुलना वेदपुरुष के क्रमशः पाद, हस्त, नेत्र, श्रोत्र, घ्राण तथा मुख रूपी अंगों से की गयी है --

छन्दः पादौ तु वेदस्य हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते।
ज्योतिषामयनं चक्षुर्निरुक्तं श्रोत्रमुच्यते।।
शिक्षा घ्राणं तु वेदस्य मुखं व्याकरणं स्मृतम्।
तस्मात्साङ्गमधीत्यैव ब्रह्मलोके महीयते।।
पाणिनीयशिक्षा, 41-42

इन वेदाङ्गों में आचार्य यास्ककृत निरुक्त का महत्त्व अत्यधिक है। निरुक्तशास्त्र के अध्ययन के बिना न तो वेदमन्त्रों के अर्थ को जाना जा सकता है तथा न ही संहिता-पाठ को पद-पाठ में परिवर्तित किया जा सकता है --

'अथापि इदम् अन्तरेण-मन्त्रेष्वर्थप्रत्ययो न विद्यते।'
निरुक्त, 1.5

'अथापीदमन्तरेण पद-विभागो न विद्यते।'
निरुक्त, 1.5

इसके अतिरिक्त निरुक्तशास्त्र वैदिक मन्त्रों से सम्बद्ध देवतातत्त्व का ज्ञान करवाने में भी सहायक है एवं इसके अध्ययन से मनुष्य ज्ञानसम्पन्न होकर सर्वत्र प्रशंसा को प्राप्त करता है --

'अथापि याज्ञे दैवतेन बहवः प्रदेशा भवन्ति, तदेतेनोपेक्षितव्यम्।'
'अथापि ज्ञान प्रशंसा भवति, अज्ञान-निन्दा च।'
निरुक्त, 1.6

निरुक्त का प्रमुख उद्देश्य किसी शब्द अथवा पद के प्रकृति एवं प्रत्यय को अलग-अलग करके उसके स्वरूप का निर्वचन करना है। इस दृष्टि से आचार्य यास्क ने 'निघण्टु' (कठिन वैदिक शब्दों का संग्रह) में सङ्कलित शब्दों का निर्वचन करते समय जिस वैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपनाया है, वह वर्तमान समाज के सन्दर्भ में अत्यन्त उपयोगी तथा मार्गप्रदर्शक है।

संस्कृत साहित्य में अविवेकशीलता को अनर्थों का कारण स्वीकार किया गया है --

यौवनं धनसम्पत्तिः प्रभुत्वमविवेकिता।
एकैकमप्यनर्थाय किमु यत्र चतुष्टयम्।।
हितोपदेश, प्रस्ताविका, 11

सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदम्।
वृणुते हि विमृश्यकारिणं गुणलुब्धाः स्वयमेव सम्पदः।।

संस्कृत विभाग, डी. एम. कॉलेज, मोगा।

Vol. 8 No. 1-2, March-Sep. 2017
ISSN : 0976-0237

हितोपदेश,4.97,किरातार्जुनीयम्,2.30

आचार्य यास्क ने 'मनुष्य' को मनुष्य कहने का वैज्ञानिक दृष्टिकोण समझाते हुये इसका निर्वचन किया है। उनके कथनानुसार सोच-विचार कर कार्य में प्रवृत्त होने के कारण ही इसे 'मनुष्य' कहा जाता है ---

"मत्वा कर्माणि सीव्यन्ति"

निरुक्त, 3.2

अतः निरुक्तकार का यह निर्वचन मनुष्य को अविवेकिता के परित्यागपूर्वक उसे सोच-समझ कर कार्य करने का निर्देश देता है, जोकि मनुष्य एवं समाज के लिये अत्यन्त लाभप्रद है।

वर्तमान समाज में कन्या-भ्रूण हत्या की कुरीति को रोकने के लिये अनेक उपाय किये जा रहे हैं। आदि काल से संस्कृत मनीषी भ्रूण-हत्या के विरोधी रहे हैं। महर्षि वाल्मीकि की दृष्टि में भ्रूण-हत्या करने वाला मनुष्य नरक का भागी होता है --

भ्रूणहत्याामसिप्राप्ता कुलस्यास्य विनाशनात्।
कैकेयि नरकं गच्छ मा च तातसलोकताम्।।

वाल्मीकीयरामायण, 2.74.4

पराशरस्मृति भी भ्रूण-हत्या के प्रति अपने विरोध को प्रकट करते हुये गर्भपात कराने वाली स्त्री के साथ वार्तालाप निषेध की बात करती है --

'गर्भपातं च या कुर्यान् न तां समभाष्येत् क्वचित्।'...

पराशरस्मृति, 4.9

जहां आज हम जन्म लेने से पूर्व ही कन्या को गर्भ में ही समाप्त कर रहे हैं, वहीं आचार्य यास्क ने इसके विपरीत 'कन्या' का महत्त्व वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत करते हुये इसका निर्वचन किया है। उनके अनुसार 'कन्या' शब्द का निर्वचन है --

'कन्या कमनीया भवति'

निरुक्त, 4.2

अर्थात् वह 'कमनीय' भाव सुन्दर होती है, इसलिये 'कन्या' कहलाती है, अथवा 'कमनीय' शब्द का एक अर्थ 'एषणीय' भी होता है। क्योंकि यह सबके लिये वाञ्छनीय होती है, इसलिये 'कन्या' कहलाती है।

यदि आधुनिक समाज आचार्य यास्क के निर्वचनानुसार कन्या को जीवन में वाञ्छनीय समझ लें तो कन्या-भ्रूण हत्या जैसी सामाजिक बुराई स्वतः ही समाप्त हो जायेगी।

ईश्वर ने इस सृष्टि का बहुत ही सोच-समझ कर निर्माण किया है। दिन का समय कार्य करने के लिये तथा रात्रि का समय विश्राम के लिये निर्धारित है। ऋग्वेद का कथन है कि रात्रि का समय हो जाने पर सूर्य कार्यशील मनुष्यों की कार्य-समाप्ति के बीच में ही अपने किरणों के जाल को समेट लेते हैं एवं रात्रि सम्पूर्ण जगत् को आच्छादित करने वाले अन्धकार को विस्तृत कर देती है --

तत्सूर्यस्य देवत्वं तन्महित्वं मध्या कर्तोर्विततं सं जभार।
यदेदयुक्त हरितः सधस्थादाद्रात्री वासस्तनुते सिमस्मै।।

ऋग्वेद, 1.115.4

परन्तु आधुनिक युवा वर्ग विश्राम की अपेक्षा रात्रि का अधिकतर प्रयोग इन्टरनेट तथा मोबाईल चैटिंग के लिये अधिक कर रहा है। आचार्य यास्क ने 'रात्रि' शब्द का निर्वचन करते हुये कहा है कि इसका नाम रात्रि इसलिये पड़ा क्योंकि यह दिन में काम करने वाले प्राणियों को विश्राम देकर उन्हें दीर्घायु के लिये स्थिर करती है ----

Vol. 8 No. 1-2, March-Sep. 2017
ISSN : 0976-0237

'...उपरमयतीतराणि ध्रुवीकरोति....।' निरुक्त, 2.6

आचार्य यास्क के इस निर्वचन के आधार पर मनुष्य के स्वास्थ्य एवं दीर्घायु हेतु रात्रि का प्रयोग विश्राम के लिये किया जाने की अनिवार्यता को प्रतिपादित करना आचार्य यास्क के वैज्ञानिक दृष्टिकोण को प्रकट करता है।

शिक्षक समाज का पथ-प्रदर्शक कहलाता है। संस्कृत साहित्य में आचार्य अर्थात् शिक्षक को 'आचार्य देवो भव' कहकर अत्यधिक सम्मान दिया गया है। गुरु के महत्त्व का प्रतिपादन करते हुये कहा गया है कि गुरु को माता, पिता मानना चाहिये तथा उससे किसी भी अवस्था में द्रोह नहीं करना चाहिये। जो शिष्य वाणी, मन एवं कर्म से गुरु का आदर नहीं करते, उनके द्वारा अध्ययन किया हुआ शास्त्रज्ञान भी उनकी रक्षा नहीं कर पाता ---

...तं मन्येत पितरं मातरं च तस्मै न द्रुह्येत्कतमच्चनाह।
अध्यापिता ये गुरुं नाद्रियन्ते विप्रा वाचा मनसा कर्मणा वा।
यथैव ते न गुरोर्भोजनीयास्तथैव तान्न भुनक्ति श्रुतं तत्।।

निरुक्त, 2.1.2-3

आधुनिक समाज में शिक्षकों द्वारा शिष्यों से दुर्व्यवहार की अनेक घटनायें हमारे सम्मुख आ रही हैं। आचार्य यास्क ने वैज्ञानिक विधि से 'आचार्य' पद का निर्वचन करते हुये उसके कर्त्तव्यों का भी निर्धारण किया है। आचार्य यास्कानुसार आचार्य का कार्य केवल विद्यार्थी को शिक्षा देना ही नहीं है, अपितु उसमें सदाचार को भी धारण करवाना है। साथ ही विद्यार्थी की बुद्धि में विभिन्न शास्त्रों के रहस्य का ज्ञान प्रवेश करवाकर उसे प्रबुद्ध बनाना है ---

'आचार्यः आचारं ग्राहयति, आचिनोति अर्थान्, आचिनोति बुद्धिं इति वा।'

निरुक्त, 1.2

यास्क के वैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपना कर यदि आचार्य इस प्रकार शिष्य को सदाचारी बना देगा तो समाज में अव्यवस्था की भी सम्भावना नहीं रहेगी।

सन्तान का मानवीय जीवन में बहुत महत्त्व है। 'महाभारत' का कथन है कि यज्ञ, दान, अध्ययन तथा बहुदक्षिणा वाले यज्ञ-- ये सब सन्तानोत्पत्ति के सोलहवें अंश के भी समतुल्य नहीं हैं --

इष्टं दत्तमधीतं च यज्ञाश्च बहुदक्षिणाः।
सर्वमेतदपत्यस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम्।।

महाभारत, सभापर्व, 41.27

यदि माता-पिता के लिये सन्तान का इतना अधिक महत्त्व है तो सन्तान को भी चाहिये कि वह अपने माता-पिता के प्रति कर्त्तव्यों का भली-भान्ति पालन करे। पुत्र के कर्त्तव्यों का निर्धारण करते हुये आचार्य यास्क का वैज्ञानिक दृष्टिकोण बताता है कि पुत्र वह है जो पिता की पूर्णतः रक्षा करे अथवा पिता के लिये पिण्डदान करे, उसका पालन-पोषण करे अथवा जो 'पुन्' नामक नरक से पिता की रक्षा करे --

"पुरु त्रायते इति पुत्रः, निरपणाद् वा, पुन् नरकं ततस्त्रायते इति वा।"

निरुक्त, 2.3

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर पुत्र वही है, जो माता-पिता का पालन-पोषण करे। यदि हम इस निर्वचन के वैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपने जीवन में धारण कर लें तो वृद्धाश्रमों में बुजुर्ग माता-पिता को निवास के लिये बाध्य नहीं होना पड़ेगा।

*Vol. 8 No. 1-2, March-Sep. 2017*
*ISSN : 0976-0237*

वर्तमान समाज में भाई-भाई का कलह सर्वत्र दृष्टिगोचर हो रहा है। पैतृक सम्पत्ति को लेकर भाईयों में झगड़े साधारण सी बात हो गयी है। भाई-भाई में जो स्नेह की पराकाष्ठा वाल्मीकीयरामायण में दिखाई देती है, उसका आज पूर्णतः लोप हो चुका है। युद्धभूमि में मूर्च्छित लक्ष्मण के लिये विलाप करते हुये राम कहते हैं कि मर्त्यलोक में ढूंढने पर मुझे सीता समान दूसरी स्त्री तो मिल सकती हे, परन्तु लक्ष्मण तुल्य भाई का मिलना असम्भव है --

शक्या सीतासमा नारी मर्त्यलोके विचिन्वता।
न लक्ष्मणसमो भ्राताः सचिवः साम्परायिकः।।

वाल्मीकीयरामायण, 6.49.6

शुक्रनीति का कथन है कि अपने भाई के विद्यमान रहते पिता का सारा अर्जित धन मेरा ही हो, किसी दूसरे भाई के हाथ कुछ न लगे, दूसरा भाई मेरे अधीन रहे, मैं किसी के अधीन न रहूँ, इसे अलग हटाकर सम्पूर्ण धन का मैं अकेले ही उपभोग करूँ -- इस प्रकार जो भाई परस्पर विचार रखते हैं, वे एक-दूसरे के परम-शत्रु कहलाते हैं ---

भ्रातृभावे पितृद्रव्यमखिलं मम वै भवेत्।
न स्यादेतस्य वश्येऽयं ममैव स्यात् परस्परम्।।
भोक्ष्येऽखिलं चैतद्विनान्यं स्तः सुवैरिणौ।...

शुक्रनीति, 4.1.6-7

आचार्य यास्क ने 'भ्राता' शब्द का निर्वचन करते हुये हमें निर्देश दिया है कि भाई को भाई इसलिये बोलते हैं क्योंकि एक तो यह सम्पत्ति में हिस्सेदार होता है तथा दूसरे उसका पालन-पोषण अपेक्षित होने के कारण वह 'भ्राता' कहलाता है --

'भ्राता भरतेर्हरति कर्मणः। हरते भागं भर्त्तव्यो भवतीति वा'

निरुक्त, 4.4

उपर्युक्त 'भ्राता' पद की यास्ककृत वैज्ञानिक व्युत्पत्ति भाई-भाई में वैर-विरोध की समाप्ति हेतु अत्यन्त लाभदायक है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि आधुनिक समाज में प्रचलित कन्या-भ्रूण हत्या, अविवेकिता, माता-पिता की अवहेलना, भाई-भाई में टकराव आदि कुरीतियों को दूर करने में तथा शिष्यों को आचारवान् बनाने में आचार्य यास्क का निर्वचन सम्बन्धी वैज्ञानिक दृष्टिकोण महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।